को विवेगी

(विवेकी कौन)

ग्रंथकार

अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी

आचार्य श्री 108 वसुनंदी जी मुनिराज

ग्रंथ – को विवेगी (विवेकी कौन)

मंगल आशीर्वाद

परम पूज्य सिद्धान्त चक्रवर्ती राष्ट्रसन्त
श्वेतपिच्छाचार्य श्री 108 विद्यानन्दजी मुनिराज

ग्रंथकार –

परम पूज्य अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी आचार्य श्री वसुनंदी जी मुनिराज

सम्पादन – आर्यिका वर्धस्वनंदनी

संस्करण - प्रथम, 2021

ISBN : 978-93-94199-03-3

प्रतियाँ - 1000

मूल्य - सदुपयोग

प्राप्ति स्थान

निर्ग्रन्थ ग्रन्थमाला समिति
ई० 102 केशर गार्डन
सै० 48 नोएडा-201301
मो. 9971548889
9867557668

मुद्रण व्यवस्था

अलंकार प्रकाशन
मो. 9310367802

सम्पादकीय

भव्या नरा ज्ञानरथाधिरूढ़ा, न जीवितं तत्त्वविवेक मुक्तम्।
अज्ञानिनो मौढ्यरथाधिरूढ़ा, व्रजन्ति श्वभ्राभिधपत्तनं वै॥

ज्ञान रूपी रथ पर सवार हुए भव्य जीव शीघ्र मोक्ष रूपी नगर को प्राप्त होते हैं और मूर्खता रूपी रथ पर सवार हुए अज्ञानी जीव निश्चय से नरक रूपी नगर को प्राप्त होते हैं।

भत्ति-सुक्ख-संतीणं, तुट्ठीए तिप्पीए णिगरणं च।
णाणं व णत्थि अण्णं, णो भूदो खलु होस्सदे णो॥75॥
(विद्या वसु श्रा.)

ज्ञान के समान भक्ति, सुख, शांति, पुष्टि और तृप्ति का कारण अन्य न था, न है और न होगा।

आत्मिक सौंदर्य का जन्म संस्कृति के माध्यम से होता है। संस्कृति जितनी श्रेष्ठ होती है उतनी ही संस्कारयुक्त मानव जाति का निर्माण होता है। धर्मानुसार अटल आचार-संहिता संस्कृति है; और समाज की परस्पर शिष्टतानुबन्धिनी चर्या सभ्यता है। सभ्य शब्द को परिभाषित करते हुए मनीषियों ने कहा है कि—जो शिष्ट व सज्जनों की सभा में बैठने योग्य माने जाते हैं अथवा जो सभा में मान्य कहे जाते हैं वे सभ्य हैं। यह गरिमापूर्ण अर्थ सभ्य को शिष्ट भी स्वीकार करता है। जो संस्कृति का पालक, संवाहक, शिष्ट एवं विवेकयुक्त है वह ही सभ्य कहा जाता है। सभ्य होने के लिए व्यक्ति का विवेकपूर्ण सुसंस्कृत होना अत्यावश्यक है।

सभ्य, शिष्ट वा विवेकवान् उस चंदन के वृक्ष के समान होता है; जो अपने समीपवर्ती अन्यवृक्षों को भी निजगंध से सुरभित कर देता है। वह उस चंद्रमा के समान होता है जो सभी को शीतलता प्रदान करता है। विवेकी व्यक्ति उस सरिता के समान होता है जो सभी की तृषा शांत करती है, जिससे संस्पर्शित वायु अन्य सुदूरवर्ती को भी शीतलता प्रदान करती है और देह संताप को नष्ट कर देती है। विवेकी व्यक्ति उस पुष्पित और फलित वृक्ष के समान होता है जो अन्यों पर अविवेक वा बुद्धिहीनता के द्वारा आने वाली बाधा रूपी घाम से उनकी रक्षा करता है, स्वानुभव के सरस फलों से उनको पुष्टता प्रदान करता है।

विवेकवान् व्यक्ति का निर्णय उसकी वेशभूषा से नहीं होता। उसकी संस्कारयुक्त, संस्कृति से अनुस्यूत क्रियाएँ ही उसके विवेकी होने की परिचायक हैं। यदि संस्कार दोषयुक्त हो तो उसमें उत्तम व्यक्तित्व उत्पन्न नहीं हो सकता। संस्कृति से ही सभ्यता का निर्माण होता है। विवेकयुक्त आचरण व्यक्ति को संस्कृति का पोषक व सभ्य सिद्ध करता है।

प्रस्तुत ग्रंथ **'को विवेगी'** परम पूज्य अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी आचार्य श्री 108 वसुनंदी जी मुनिराज द्वारा प्ररूपित 84 गाथाओं का लघुकाय किन्तु अर्थ वैशिष्ट्य को लिए अनुपम ग्रंथ है। ग्रंथकार ने वर्तमान परिपेक्ष्य में व्यक्ति को उनकी सभ्यता से अनुस्यूत संबंध बनाए रखने हेतु इस ग्रंथ का प्रणयन किया। विवेकी व्यक्ति ही स्वयं का, अन्यों का, समाज, देश वा राष्ट्र का हित कर सकता है। स्वयं उठता हुआ ही दूसरों के उत्थान में समर्थ हो सकता है। अविवेकी, अशिष्ट व्यक्ति स्वयं पतित होता हुआ दूसरों के पतन का कारण बनता है।

मूर्खों पर टिप्पणी करने वाले साहित्यकारों की कमी तो कभी नहीं रही किन्तु विवेकवान् के लक्षणों का उद्योतन करने वाले आचार्य महाराज का यह सकारात्मक दृष्टिकोण श्लाघनीय व अनुकरणीय है। ग्रंथ में कही-कही असभ्य, अविवेकी वा मूर्खों की क्रियाओं को भी कहा है। क्योंकि सर्व विदित है–

'बिन जाननते दोष गुणन को, कैसे तजिये गहिये'

किन्तु उसके तुरंत आगे उससे विपरीत क्रियाएँ विवेकवानों की होती हैं, यह कहकर शिष्ट व विवेकवानों के लक्षणों को अवधारण हेतु निरूपित किया। यथा–

अप्पसत्तिं धरंतो, दोहदि कुच्झदि वि बहुसत्ति जुदाण।
अप्पाये वि विच्चदे, बहुअहियं च गुललदि मूढो॥71॥
तव्विवरीय-विवित्तो, कहणपुव्वे खलु चिंतदे जो सो।
सुकज्जेसुं तप्परो, विअण्हो संतो य विवित्तो॥72॥

अर्थ–जो अल्पशक्ति को धारण करता हुआ भी बहुत शक्तिवानों पर क्रोध करता है, उसका द्रोह करता है, जो अल्प आय होने पर भी बहुत अधिक खर्च करता है एवं चापलूसी करता है, वह मूर्ख है। उससे विपरीत विवेकी है। जो कहने से पूर्व सोचता है, अच्छे कार्यों में तत्पर रहता है, तृष्णारहित व शांत है, वह विवेकी है।

उत्तम संस्कृति को जीवित रखना प्राणीमात्र के लिए हितकर है। एक विवेकवान् व्यक्ति ही सरिता, जलाशय, सूर्य, चंद्रमा तथा वृक्ष आदि की भांति सबके लिए वरदान रूप सिद्ध हो सकता है। अतः आचार्य भगवन् द्वारा प्रणीत यह ग्रंथ सबके द्वारा पठनीय है। जिससे जीवन की निर्मल धारा में संस्कृति के पुष्प विकसित हो सकें।

आचार्य भगवन् की अविच्छिन्न लेखनी उनकी अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगिता को प्रमाणित करती है। सिद्धांत आदि के कठिन विषयों पर वा बहुजनोपयोगी सामान्य विषयों पर उनकी लेखनी सदैव प्रवर्तमान रहती है। यह समाज, देश वा राष्ट्र युगों-युगों तक भी उनके द्वारा प्रदान किए गये श्रुत को विस्मृत न कर सकेगा, एवं शताब्दियाँ उनके प्रति अपना कृतज्ञ भाव अवश्य व्यक्त करेंगी।

प्रस्तुत ग्रंथ **'को विवेगी'** अर्थात् 'विवेकी कौन' के संपादन में कोई त्रुटि रह गई हो तो विज्ञजन संशोधित कर पढ़ें, हंसवत् गुणग्राहीदृष्टि से ग्रंथाध्ययन करें। जन-जन के श्रद्धापुंज परम पूज्य अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी आचार्य गुरुवर श्री वसुनंदी जी महाराज का संयम, तप, ज्ञान व साधना का सौरभ सहस्रों वर्षों तक विश्व को सुरभित करता रहे। गुरुवर श्री को आरोग्य लाभ हो एवं अपने लक्ष्य को शीघ्र प्राप्त करें। परम पूज्य गुरुवर श्री के चरणों में सिद्ध-श्रुत-आचार्य भक्ति सहित कोटिशः नमोस्तु! नमोस्तु! नमोस्तु!... ।।

''जैनम् जयतु शासनम्''

श्री शुभमिति आश्विन कृष्ण अमावस्या
श्री वीर निर्वाण संवत् 2547
बुधवार 06-10-2021
सिद्धक्षेत्र तारंगा जी

-आर्यिका वर्धस्वनंदनी

दो शब्द

प. पू. आचार्य श्री वसुनंदी जी महाराज अनवरत ज्ञान की साधना में लगे रहने वाले संत हैं। आ. श्री ने जैन आगमों की मूल भाषा प्राकृत भाषा में कई कृतियों का सृजन करके प्राकृत भाषा को समृद्ध किया है। भारतीय साहित्य को कई अमूल्य निधियाँ प्रदान की हैं।

उसी श्रृंखला में प्रस्तुत कृति है। ज्ञान का फल विवेक की प्राप्ति है। ज्ञान तो इस संसार में सभी प्राप्त कर लेते हैं लेकिन उस ज्ञान का प्रयोग कैसे करना है यह विवेक बड़े-बड़े डिग्रीधारियों में भी नहीं होता है। ज्ञान की प्राप्ति कभी-कभी दंभ का कारण भी बन जाती है। कभी-कभी ग्रामीण अनपढ़ लोग भले ही अधिक पढ़े-लिखे न हों लेकिन वे ज्ञानी कहे जाने वाले तथा कथित बुद्धिजीवियों से अधिक विवेकी होते हैं। इस कृति को पढ़कर हम सभी स्वयं की परीक्षा कर सकते हैं कि हम कितने विवेकी हैं और कितने अविवेकी। जिन जीवन के क्षेत्रों में आज तक अविवेक पूर्ण कार्य करते आ रहे हैं और हम अपने आप को विवेकी मानने की गलती कर रहे हैं। विवेक से तात्पर्य है क्या अच्छा है क्या बुरा है। हमें अपने जीवन में बुराइयों को कम करना है, अच्छाइयों को बढ़ाना है, तभी हम विवेकी कहलायेंगे।

पूज्य श्री ने प्रस्तुत कृति **'को विवेगी'** में जीवन के छोटे-छोटे प्रसंगों को छूकर इस कृति को महत्वपूर्ण बना दिया है।

यह कृति पूज्य श्री के अभीक्ष्ण स्वाध्याय की परिणति है। पूज्य श्री अपने प्रवचन व लेखन में जैन सिद्धांतों के गूढ़ रहस्यों को सरलता से समझा देते हैं। आप प्रतिदिन स्वयं तो चारों अनुयोगों का स्वाध्याय

करते ही हैं, अपने शिष्यों और सम्पर्क में आने वाले गृहस्थों को जैनागम सागर के अमूल्य रत्न सहज भाव में बाटते रहते हैं। आचार्य भक्ति के पश्चात सभी जन आपके मुख से प्रथमानुयोग की कहानी सुनने को लालायित रहते हैं।

आपने प्रस्तुत ग्रंथ में जिन जीवन मूल्यों और संस्कारों पर जोर दिया, ग्रंथ में उन्हें उसी तरह समायोजित किया है कि पाठक के चित्त पर उसका प्रभाव अवश्यमेव होगा। ऐसा करने में आप सिद्ध हस्त हैं, क्योंकि आप आचार्य विद्यानंद जी के शिष्य हैं। सभी जानते हैं कि आचार्य श्री विद्यानंद जी महाराज तथ्यों की पर्त दर पर्त खोलकर माखन में से मक्खन की तरह तथ्यों को निकालकर ही दम लेते थे। वही प्रज्ञा आपने अपने गुरु से पाई है।

प. पू. आचार्य विद्यानंद जी हमेशा प्राकृत भाषा के प्रचार-प्रसार सृजन की बात करते थे। प. पू. आचार्य वसुनंदी जी महाराज ने अनेकानेक जनोपयोगी सरल-सुबोध भाषा में प्राकृत भाषा में कृतियों को निबद्ध करके अपने गुरु के प्रति सच्ची श्रद्धाजंलि प्रकट करके उनकी भावनाओं को मूर्त रूप प्रदान किया है।

हमें विश्वास है कि यह ग्रंथ स्वाध्याय प्रेमियों के बीच तो समादृत होगा ही। प्राकृत भाषा के नए विद्यार्थियों के लिए भी प्रेरणा का कार्य करेगा।

गुरु चरण चञ्चरीक

पं. मनोज शास्त्री प्रतिष्ठाचार्य

को विवेगी

सम्मत्तजुत्तणाणं, सुहंकरं सव्वसंतिदायगं च।
संपुण्णसण्णाणजुद-सव्वण्हू सिद्धा पणमामि॥1॥

अर्थ–सम्यक्त्व से युक्त सुखकर, सर्व शांतिदायक ज्ञान को तथा संपूर्ण सम्यग्ज्ञान से युक्त सर्वज्ञ व सिद्धों को मैं (आचार्य वसुनंदी मुनि) नमस्कार करता हूँ।

उक्किट्ठ-विवेगसीला, दियंबर-सूरी पाढगा साहू।
देवेहि वंदणीया, णाणावरणं खयिदुं थुवमि॥2॥

अर्थ–देवों द्वारा वंदनीय, उत्कृष्ट, विवेकशील, दिगंबर आचार्य, उपाध्याय व साधुओं को ज्ञानावरण कर्म के क्षय के लिए मैं सदा नमस्कार करता हूँ।

विवेगेणं विणा बहु-दुहं सहंते अणंतयालंतं।
तत्तो दु आइक्खामि, को विवेगी-णामसुगंथं॥3॥

अर्थ–विवेक के बिना जीव अनंतकाल तक बहुत दु:ख सहते हैं इसलिए मैं (आचार्य वसुनंदी मुनि) **'को विवेगी'** (विवेकी कौन) नामक ग्रंथ को कहता हूँ।

इह लोए विज्जंता, सुही संतिकारग-विवेगसीला।
सव्वा सिलाहणीया, विसिट्ठा सुजणाणायंसा॥4॥

अर्थ–इस लोक में विद्यमान सभी विवेकीजन सुखी, शांतिकारक, प्रशंसनीय, विशिष्ट व सज्जनों के आदर्श हैं।

जो पिअरस्स सुभत्तो, गुणगाहगो तहा आणायारी।
कित्तिवड्ढगो विवेग-सीलो सो इयरो मूढो य॥5॥

अर्थ–जो माता-पिता का भक्त, आज्ञाकारी, उनकी कीर्त्ति को वृद्धिंगत करने वाला तथा गुणों को ग्रहण करने वाला है वह विवेकशील है एवं इससे इतर मूर्ख है।

जीवाणं सत्ती चिय, समा होदि णेव वत्तरूवेणं।
विरोहं बलवंताण, सगादु कुणदि जो सो मूढो॥6॥

अर्थ–जीवों की शक्ति व्यक्त रूप से समान नहीं होती। जो अपने से बलवानों का विरोध करता है वह मूर्ख कहलाता है।

पुज्जगुणीणं कुणेदि, जो सम्माणं आयरं हिदत्थं।
सो विवेगसंजुत्तो, खलियारणं मूढ-लक्खणं॥7॥

अर्थ–जो हित के लिए पूज्यजनों तथा गुणीजनों का आदर व सम्मान करता है वह विवेक से युक्त है। तिरस्कार करना मूर्खों का लक्षण है।

जो देहसुंदरिमाइ, थब्भेदि सत्तीए लायण्णे य।
सो मूढो ण जाणेदि, सरीरस्स अणिच्च-सहावं॥8॥

अर्थ–जो देह की सुंदरता, शक्ति व लावण्य पर गर्व करता है वह मूर्ख शरीर के अनित्य स्वभाव को नहीं जानता।

विवेगी णेव थब्भदि, सगदेहम्मि णवरि सदुवजोगं हि।
कुव्वदि सगसरीरस्स, सय संजमतवज्झाणेहिं॥9॥

अर्थ–विवेकी अपनी देह पर घमंड नहीं करता। विशेषता यह है कि वह संयम, तप व ध्यान के द्वारा अपने शरीर का सदुपयोग करता है।

सगदेहेणं कुव्वदि, तित्थवंदणं सेवं पुज्जाणं।
भत्तिं सुपत्तदाणं, अण्णसुकज्जाइं विवेगी॥10॥

अर्थ–जो अपनी देह से तीर्थवंदना, पूज्यजनों की सेवा, भक्ति, सुपात्रदान व अन्य समीचीन कार्यों को करता है वह विवेकी है।

कुव्वदि सगवयणेहिं, माणणीयाणं वंदणीयाणं।
तिरक्कारमवमाणं, मूढसिरोमणी गव्विट्ठो॥11॥

अर्थ–जो अपने वचनों से माननीय व वंदनीय जनों का तिरस्कार या अपमान करता है वह गर्विष्ठ मूर्खों का शिरोमणी है।

वयणाण सदुवजोगं, गुरुत्थुदि-मच्चणं जिणवरभत्तिं।
उवएसं संवादं, साधम्मीसु कुणदि विवित्तो॥12॥

अर्थ—जो वचनों का सदुपयोग करता है, गुरु स्तुति, अर्चना, जिनवर भक्ति, उपदेश, साधर्मियों से संवाद करता है वह विवेकी है।

धम्मीणं सिलाहणं, लहुजणेसु पेम्मं सगासिदाणं।
पणोल्लणं स-खिंसणं, विवित्ताण लक्खणाणि जाण॥13॥

अर्थ—धर्मियों की प्रशंसा करना, लघुजनों में प्रेम, स्वाश्रितों को प्रेरणा देना व अपनी निंदा करना विवेकीजनों के लक्षण जानने चाहिए।

जो सगवयणेहिं सय, कुणदि पराण पसंसं सुचित्तेण।
पसंसगो सुविवित्तो, पहाणपुरिसो दु सिट्ठो सो॥14॥

अर्थ—जो शुभ चित्त से अपने वचनों से सदा दूसरों की प्रशंसा करता है वह प्रशंसक, प्रधान पुरुष व शिष्ट विवेकी कहलाता है।

अप्पपसंसं कुव्वदि, सामण्णजणेसु इत्थिवग्गेसुं।
जो गायेदि सगवीर-गाहं सो मूढो हु णेयो॥15॥

अर्थ—जो अपनी प्रशंसा करता है, सामान्य जन व स्त्रीवर्ग में अपनी वीरगाथा गाता है वह मूर्ख जानना चाहिए।

जो इत्थीए दासो, पसंसदि सय तं रायभावेणं।
आसत्तो विसयेसुं, मूढो सो इयरो विवित्तो॥16॥

अर्थ–जो स्त्री का दास है, रागभाव से उसकी प्रशंसा करता है, विषयों में आसक्त रहता है वह मूर्ख है, इससे इतर विवेकी जानना चाहिए।

संसारे अणेगविह-घोर-कट्ठ-किलेस-पीडा-दुहाणि।
लोए कस्स वि ठाणे, णेव सुहं चिंतदि विवेगी॥17॥

अर्थ–संसार में अनेक प्रकार के घोर कष्ट, क्लेश, पीड़ा व दु:ख हैं। लोक में किसी भी स्थान पर सुख नहीं है। विवेकी ऐसा चिंतन करता है।

देहो भवमूलो सो, जो चिय कारणं असुहकम्माणं।
पावजुदो जदि देहो, तो सव्वदा दुग्गइ-हेदू॥18॥

अर्थ–जो देह अशुभ कर्मों की कारण है वह निश्चय से संसार का मूल है। यदि देह पाप से युक्त है अर्थात् पाप कार्यों में रत है तो वह सर्वदा दुर्गति की हेतु है।

कुव्वदि पुण्णकज्जाणि, होच्चा विरत्तं सरीरादो जो।
सो विवित्तो हु णेयो, सज्जणेसु मुक्खो पुज्जोव्व॥19॥

अर्थ–जो शरीर से विरक्त होकर पुण्य कार्य करता है वह विवेकी सज्जनों में मुख्य, पूज्यजन के समान जानना चाहिए।

पंचिंदियाइ-भोया, भवरोयस्स महादुक्खहेदू य।
ण भुंजणीया कया वि, णवरि भुंजंति जीवदेहं॥20॥

अर्थ–पंचेन्द्रियादि के भोग भव रोग व महादु:ख के हेतु हैं। ये कदापि भी भोगने योग्य नहीं हैं। विशेषता यह है कि (जीव इन्हें नहीं भोगता) ये भोग ही जीव देह को भोगते हैं।

भवतणभोयविरत्तो, सम्मत्तणाणचरियजुदविवित्तो।
धम्माणुगामी तहा, परमट्ठदेवगुरुसुभत्तो॥21॥

अर्थ–जो संसार, शरीर व भोगों से विरक्त है, सम्यक्त्व, सम्यक् ज्ञान व चारित्र से युक्त है, धर्मानुगामी तथा परमार्थ देव व गुरु का भक्त है वह विवेकी है।

हियमियप्पियसुहाइं, इट्ठमिट्ठसिट्ठाणि वयणाणि जो।
बोल्लदे सो विवित्तो, आगमणुसारेण सिविणे वि॥22॥

अर्थ–जो स्वप्न में भी हित, मित, प्रिय, शुभ, इष्ट, मिष्ट, शिष्ट तथा आगम के अनुसार बोलता है वह विवेकी है।

मिच्छापसंसं कुणदि, जो अपगडगुणं अइसयरूवेण।
वददे माणी मूढो, सो तव्विवरीयो विवित्तो।।23।।

अर्थ–जो मिथ्या प्रशंसा करता है, बढ़ा-चढ़ा कर अप्रकट गुणों को कहता है, मानी है वह मूर्ख है उससे विपरीत विवेकी है।

वेज्ज-चिगिच्छगाणं च, तंतिग-भूदपेद-मंतवादीण।
जो णो कुणदि विरोहं, कया वि सो विवित्तो णेयो।।24।।

अर्थ–जो वैद्य, चिकित्सक, तांत्रिक, भूत-प्रेत, मंत्रवादियों का कभी भी विरोध नहीं करता, वह विवेकी जानना चाहिए।

सुरायं सचिवं सच्चवायिं दंडणायगं पुरोहं च।
रक्खगा पुज्जपुरिसा, खिंसदि णो विवित्तो जो सो।।25।।

अर्थ–जो समीचीन राजा, मंत्री, सत्यवादी, दंडनायक, पुरोहित, रक्षकों व पूज्य पुरुषों की निंदा नहीं करता, वह विवेकी है।

सव्वेसु मित्तिभावो, दीणेसुं उवयार-दयाभावो।
सज्जणेसु वच्छल्लं, जस्स हवेदि हु विवित्तो सो।।26।।

अर्थ–जिसका सभी में मैत्रीभाव, दीनों में उपकार व दयाभाव, सज्जनों में वात्सल्य भाव होता है वह विवेकी है।

अबोहबालेसु णेव, कुव्वदि मित्तिं कुइत्थीसु रायं।
अकारणं णेव हसदि, जो सो विवेगी खलु लोए।।27।।

अर्थ–जो अबोध बालकों में मैत्री नहीं करता, कुस्त्रियों में राग नहीं करता, अकारण नहीं हँसता वह लोक में विवेकी जानना चाहिए।

विरोहं बहुजणाणं, णेव कुणदि धम्मणिंदं च णिवस्स।
आणा-उल्लंघणं ण, ठावदि कुणीदि-कयायारं।।28।।
गद्दहादीसुं णेव, छडेदि कक्कसाणि परुसाइं जो।
असच्चवयणाणि कया वि णेव बोल्लदि विवित्तो सो।।29।।

(जुगवं)

अर्थ–जो बहुतजनों का विरोध नहीं करता, धर्म की निंदा नहीं करता, राजा की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करता, कुनीति व कदाचार की स्थापना नहीं करता, गधे आदि पर आरूढ़ नहीं होता, कर्कश, परुस व असत्य वचन कभी नहीं बोलता वह विवेकी है।

णो दुट्ठाणं सेवं, कुणदि संगदिं वुग्गहआणं णो।
धम्मं पडि सद्धालू, णादव्वो जो सो विवित्तो।।30।।

अर्थ–जो दुष्टों की सेवा नहीं करता व कलहकारकों की संगति नहीं करता है, धर्म के प्रति श्रद्धावान् है वह विवेकी जानना चाहिए।

अहिंसगो संतोसी, सरलो सहज-उदारो सच्चत्थी।
जीवाणमुवयारगो, सत्तिअ-भोयी चिय विवित्तो॥31॥

अर्थ—जो अहिंसक, संतोषी, सरल, सहज, उदार, सत्यार्थी, जीवों का उपकारक एवं सात्त्विक भोजी है वह विवेकी है।

सुवदि णो जागरियेसु, जागसदे णेव तह सयंतेसुं।
गच्छंतो णो खादादि, हसंतो ण भासदि विवेगी॥32॥

अर्थ—जो जागते हुओं के मध्य सोता नहीं है और सोते हुओं के मध्य जागता नहीं है, जो चलते-चलते खाता नहीं है और हँसते-हँसते बोलता नहीं है वह विवेकी है।

सुक्किदं णेव मण्णे, गदयालं णेव सोअदे कया वि।
सहाइ सग-अवमाणं, णेव वददि जो सो विवेगी॥33॥

अर्थ—जो अपने द्वारा किए गए सुकार्य को मानता नहीं अर्थात् भूल जाता है, बीते हुए समय का कभी शोक नहीं करता एवं सभा में अपने अपमान को कहता नहीं, वह विवेकी है।

गुत्तवत्तं णो फुडदि, विस्सस्सणीयाण अविस्सासं ण।
अविस्सस्सणीयाण ण, कुव्वदि विस्सासं विवित्तो॥34॥

अर्थ–जो गुप्तवार्ता को प्रकट नहीं करता, जो विश्वसनीय जनों पर अविश्वास एवं अविश्वसनीय जनों पर विश्वास नहीं करता वह विवेकी है।

जूआदि-सत्तवसणं, आमुयदे अण्णमहापावाणि वि।
सज्जणाण जोग्गं सय, कत्तव्वं पालदि विवित्तो॥35॥

अर्थ–जो जूआ आदि सातव्यसनों एवं अन्य महापापों का भी त्याग करता है एवं सज्जनों के योग्य अपने कर्त्तव्य का पालन करता है वह विवेकी है।

मादगं तामसिगं च, अभक्खं च लोयणिंदं पदत्थं।
सगपइडिविरुद्धं जो, णेव भुंजेदि विवित्तो सो॥36॥

अर्थ–जो मादक (नशीले), तामसिक, अभक्ष्य, लोकनिंद्य पदार्थ वा अपनी प्रकृति के विरुद्ध पदार्थों का सेवन नहीं करता वह विवेकी है।

उज्जमसीलो जो सो, सहजपविट्ठिजुत्तो सज्जणेसुं।
सुणायणीदि-पवीणो, मज्जादारक्खग-विवित्तो॥37॥

अर्थ–जो उद्यमशील, सज्जनों के मध्य सहज प्रवृत्ति से युक्त, समीचीन न्याय व नीति में कुशल एवं मर्यादा रक्षक है वह विवेकी है।

परिवारजणेसु जस्स, हवेदि सया णिस्सत्थवच्छल्लं।
पसु-पक्खि-दीणेसुं च, करुणाभावो विवित्तो सो॥38॥

अर्थ–जिसका परिवार के लोगों में सदा नि:स्वार्थ वात्सल्य होता है एवं पशु-पक्षी व दीनों पर करुणा भाव होता है, वह विवेकी है।

गुरू मूढण्णाणीण, णाणीण विरोही अण्णाणी जो।
कुलमज्जादाहीणो, पावपोसगो हु मूढो सो॥39॥
तव्विवरीय-विवित्तो, कंखा-इस्सा-मच्छराइ-हीणो।
सवरउण्णदिरदो सो, गुणाणरागी णिच्छलो जो॥40॥

अर्थ–जो मूर्ख व अज्ञानियों का गुरु है, ज्ञानियों का विरोधी होता है, जो अज्ञानी, कुल की मर्यादा से हीन व पापों का पोषक होता है वह मूर्ख है। उससे विपरीत वृत्ति वाला विवेकी है। जो आकांक्षा, ईर्ष्या मात्सर्यादि से हीन है, स्वपर उन्नति में रत है, गुणानुरागी व निश्छल है वह विवेकी है।

णिंदावंचणहीणो, सहिण्हू कोहाइ-कसाय-रहिदो।
दीणाणं भयवदोव्व, सुहलेस्साजुत्तो विवेगी।।41।।

अर्थ–जो निंदा व कपट से हीन, सहिष्णु, क्रोधादि कषाय से रहित, दीनों के लिए भगवान् के समान व शुभ लेश्या से युक्त है, वह विवेकी है।

रोये णेव भुंजेदि, रोयवड्ढगं सगपइडिविरुद्धं।
आहारं जो सो खलु, विवित्तो णेयो णाणीहिं।।42।।

अर्थ–जो रोग में रोग वर्द्धक, अपनी प्रकृति के विरुद्ध आहार नहीं करता वह ज्ञानियों के द्वारा विवेकी जानना चाहिए।

अप्परोयं रिणं वा, णेव उविक्खदि देह-वणं कयावि।
ण धम्मकज्जेसु लोय-ववहारे चुक्कदि विवित्तो।।43।।

अर्थ–जो अल्प रोग, ऋण या शरीर के घाव की कभी भी उपेक्षा नहीं करता एवं धर्म कार्यों व लोक व्यवहार में कदापि भी चूक नहीं करता, वह विवेकी है।

परिक्खाए विणा णो, णेव विस्सस्सदे अणायगेसुं।
जत्थ णेव सम्माणं, तत्थ ण गच्छदि विवित्तो सो॥44॥

अर्थ–जो परीक्षा के बिना अनजान जनों पर विश्वास नहीं करता एवं जहाँ सम्मान नहीं हो वहाँ जाता नहीं, वह विवेकी होता है।

अपुच्छणे णेव देदि, परामस्सं उत्तरं णिद्देसं।
बेजणाण मज्झे जो, णेव वददे हु विवित्तो सो॥45॥

अर्थ–जो बिना पूछे परामर्श, उत्तर व निर्देश नहीं देता, दो लोगों के मध्य नहीं बोलता वह विवेकी है।

खणे खणे णो कोहं, माणं जिम्हं लोहं कुणदे जो।
विवित्तो कंखेदि सो, खमा-दया-सच्चाइ-गुणा य॥46॥

अर्थ–जो क्षण-क्षण में क्रोध, मान, माया व लोभ नहीं करता तथा सदा क्षमा, दया, सत्यादि गुणों की आकांक्षा करता है वह विवेकी है।

महुमच्छिअ-मीण-मकर-मंकण-मेघ-महिस-माणिणीणं व।
मदणमज्जपायीण व, ण होदि पवित्ती विवेगीण।।47।।

अर्थ–विवेकी जनों की प्रवृत्ति मधुमक्खी, मछली, मगर, खटमल, मेघ, भैंसे, मानिनी, मदन व मद्यपायी के समान नहीं होती।

विशेषार्थ–मधुमक्खी स्वयं द्रव्य का संचय तो करती है किन्तु उससे अन्यों का उपकार नहीं करती। हर बड़ी मछली छोटी मछली का भक्षण करती है, उसे सताती है। मगरमच्छ आलसी होता है। खटमल सदा दूसरों को कष्ट दे आनंद मानता है। मेघ स्वयं जल धारण करते हुए भी श्याममुखी होता है। भैंसा निर्बुद्धि व मानिनी चंचल होती है। मदन वा कामी शक्ति का दुरुपयोग करता है एवं मद्यपायी अनैतिक, अविवेकपूर्ण व धर्मविरुद्ध कार्य करता है। विवेकी की प्रवृत्ति कदापि भी इस प्रकार की नहीं होती।

कंखेदि चाडुयारा, ताण महादोसा खमेदि मूढो।
सज्जणाण लहुदोसा, णेव खमदि इयरो विवित्तो।।48।।

अर्थ–जो चापलूसों को चाहता है उनके महादोषों को भी क्षमा कर देता है एवं सज्जनों के छोटे दोषों को भी क्षमा नहीं करता वह मूर्ख है। इससे इतर विवेकी है।

विवेगी देदि दाणं, धम्मविड्ढीइ धम्मीण रक्खाइ।
मूढो देदि धणं सय, अहविड्ढीइ धम्मक्खयिदुं।।49।।

अर्थ–जो सदा धर्म की वृद्धि व धर्मियों की रक्षा के लिए दान देता है वह विवेकी है। तथा जो पाप की वृद्धि एवं धर्म क्षय के लिए धन देता है वह मूर्ख है।

सगमाणं पोसेदुं, कज्जं कुणदि दाणं देदि मेत्तं।
मूढो पाणं उज्झदि, अवि धम्मीण कट्ठं देदुं।।50।।

अर्थ–जो मात्र अपने मान के पोषण के लिए कार्य करता है, दान देता है एवं धर्मियों को कष्ट देने के लिए प्राण भी त्याग देता है वह मूर्ख है।

अइणेहीण ण पस्सदि, दोसं च गुणं णेव विरोहीणं।
मेत्तं दोसा हि सया, सो कहं णो होज्जा मूढो।।51।।
णवरि विवेगी पुरिसो, गुणा पस्सेदि सय सत्तुपक्खे वि।
विज्जंता दोसा तह, विआणदे सगमित्तेसुं वि।।52।।

अर्थ–जो सदा अतिस्नेही जनों के दोष व विरोधियों के गुण नहीं देखता, विरोधियों के मात्र दोष ही देखता है वह मूर्ख कैसे नहीं होता? अर्थात् मूर्ख होता है। विशेषता यह है कि विवेकी पुरुष सदा शत्रुपक्ष में भी गुणों को देखता है तथा अपने मित्रों में विद्यमान दोषों को भी जानता है।

किदण्हू य गंभीरो, तामसिग-रायसिग-पवित्तिहीणो।
सदारसंतोसव्वय-धारगो धीरो य विवित्तो॥53॥

अर्थ—जो कृतज्ञ, गंभीर, तामसिक व राजसिक प्रवृत्ति से हीन, स्वदार संतोष व्रत का धारक एव धैर्यवान् है, वह विवेकी है।

विज्जा-विहव-रूव-तव-णाण-कुल-पहुत्त-जाइ-सत्तीणं।
ण कुणदि गव्वं किंचिवि, उवलद्धीए हु कया वि सो॥54॥

अर्थ—जो विद्या, वैभव, रूप, तप, ज्ञान, कुल, प्रभुत्व, जाति व शक्ति का अथवा किंचित् भी उपलब्धि का कभी भी गर्व नहीं करता, वह विवेकी है।

मलिणं जस्स सरीरं, वत्थं दंतणह-णवमलदारं वि।
हवेदि पावपविट्टी, सो मूढो कहिज्जदि लोए॥55॥

अर्थ—जिसका शरीर, वस्त्र, दाँत, नख व नवमलद्वार मलिन हैं, जिसकी प्रवृत्ति पापरूप होती है वह लोक में मूर्ख कहा जाता है।

विसुद्धो तियजोगेहि, सच्छो सच्छवत्थाइधारगो य।
वत्थभूसणधारगो, णिग्गंथो य महाविवेगी॥56॥

अर्थ—जो तीनों योगों से विशुद्ध, स्वच्छ, स्वच्छ वस्त्रादि का धारक, समीचीन वस्त्र व आभूषण का धारक एवं निर्ग्रन्थ महाविवेकी हैं।

पच्छेण छिंददि जस्स, रुक्खसाहाइ चिट्ठदि तं मूढो।
पदणसीलो सगकज्ज-विरोही दु अप्पघादगो य॥57॥

अर्थ–जो जिस वृक्ष की शाखा पर बैठता है उसको ही पृष्ठ भाग से काटता है वह पतनशील, स्वकार्य का विरोधी व अपना घात करने वाला मूर्ख है।

माणेण वा कोहाइ-तिव्वकसायेहि कुणदि अवमाणं।
सवरजणाण संगदिं, दुट्ठ-णीयाण कुणदि मूढो॥58॥

अर्थ–जो मान या क्रोधादि तीव्र कषायों से अपने व अन्य जनों का अपमान करता है, दुष्ट व नीचों की संगति करता है वह मूर्ख है।

सगपुण्णं णासंतो, कुडिलभावं धरदि सगचित्ते जो।
वंचगो णिंदगो सो, मच्छरो णयहीणो मूढो॥59॥

अर्थ–जो अपना पुण्य नष्ट करते हुए अपने चित्त में कुटिल भाव धारण करता है, कपटी, निंदक, ईर्ष्यालु व न्याय नीति से हीन है वह मूर्ख है।

तिव्वलोहोदयेणं, कज्जमकज्जं हियाहियं णादि ण।
हेयुवादेयं तहा, विवेगहीणो महामूढो॥60॥
से हु विवरीय-पविट्टि-जुत्तो अइसयखमाइ-सहिदो जो।
पुज्जेहि खमापत्तो, विसुद्धचित्तो विवित्तो सो॥61॥

अर्थ–जो तीव्र लोभ के उदय से कार्य-अकार्य, हित-अहित, हेय व उपादेय को नहीं जानता वह विवेक से हीन महामूर्ख है। जो उससे विपरीत प्रवृत्ति से युक्त है, अतिशय क्षमादि से सहित है, पूज्य पुरुषों के द्वारा क्षमा का पात्र है वह विशुद्ध चित्त वाला विवेकी है।

अइसय-विणइत्तो जो, गुणीसु गुणणुरागजुदो विवित्तो।
णिम्मलजलं व सरलो, मक्खणं व सुमिदुचित्तो सो॥62॥

अर्थ–जो अतिशय विनयवान् है, गुणीजनों में गुणानुराग से युक्त है, निर्मल जल के समान सरल है एवं मक्खन के समान कोमल चित्त वाला है वह विवेकी है।

जो धायो हु णिमित्तं, सवरसंतोसविड्ढीए वा सो।
विवेगीसु पंडिदोव्व, महाविवेगी समत्तजुदो॥63॥

अर्थ–जो संतुष्ट है, स्वपर संतोष वृद्धि का निमित्त है, समता भाव से युक्त है वह विवेकियों में महाविवेकी व पंडित के समान है।

पालदि सगासिदा जो, कुच्छदि सोसदि कसायदि सो णेव।
विवित्तो पगब्भदि णो, अग्गे इत्थिबालादीणं॥64॥

अर्थ–जो अपने आश्रितों का पालन करता है उनको धिक्कारता नहीं, उनका शोषण नहीं करता एवं उन्हें ताड़ना नहीं देता तथा जो स्त्री व बालकों के आगे शेखी नहीं बखारता वह विवेकी है।

णेव होदि कुक्कुइओ, कुंची तह कलहप्पियो सो।
हरिसेदि परगुणा जो, पस्सित्ता णेव किलिसदि विवित्तो॥65॥

अर्थ–जो दूसरों के गुणों को देखकर प्रसन्न होता है, क्लेशित नहीं होता तथा जो कुचेष्टा करने वाला, कुटिल व कलहप्रिय नहीं होता वह विवेकी है।

अणिच्चं मण्णदि धणं, जोवणं जीवण-सव्वपज्जाया।
णस्सर-वत्थूसुं जो, विस्सस्सदि विवित्तो जो सो॥66॥

अर्थ–जो धन, यौवन, जीवन व सर्व पर्यायों को अनित्य मानता है, नश्वर वस्तुओं पर विश्वास नहीं करता वह विवेकी है।

सवरमाण-रक्खगो य, अग्गजणुजाण-मायर-वच्छल्लं।
देदि जो सो विवित्तो, णेहजुदववहारजुत्तो य॥67॥

अर्थ–जो स्वपर सम्मान की रक्षा करने वाला है, बड़ों के लिए आदर व छोटों के लिए सम्मान देता है और स्नेह युक्त व्यवहार से सहित है वह विवेकी है।

अइणम्मं णेव कुणदि, लालप्पदि कलहदि भिडदि जो णेव।
णेव णिब्भच्छदे अवि, णिबोहजुत्तो विवित्तो सो॥68॥

अर्थ–जो अत्यधिक मजाक नहीं करता, अत्यधिक नहीं बोलता या बकवाद नहीं करता, लड़ाई-झगड़ा नहीं करता, किसी की भर्त्सना नहीं करता वह प्रकृष्ट ज्ञान से युक्त विवेकी है।

मूढाण परामस्सं, उवएसं हि गहदि णो सज्जणाण।
णो सुणदि गुरुवएसं, इट्ठजणविरोही मूढो य॥69॥
तव्विवरीय-विवेगी, मिदव्वयी परहिदसहावजुत्तो।
भोयणे मेहुणे वा, णियकज्जेसु मज्जाइल्लो॥70॥

अर्थ–जो मूर्खों के परामर्श व उपदेश को ग्रहण करता है व सज्जनों की सलाह व उपदेश नहीं मानता, जो गुरु के उपदेश नहीं सुनता व इष्ट जनों का विरोधी है वह मूर्ख है।

उससे विपरीत विवेकी है। जो मितव्ययी, परहित स्वभाव से युक्त है, भोजन, मैथुन वा अपने कार्यों में मर्यादित है वह विवेकी है।

अप्पसत्तिं धरंतो, दोहदि कुज्झदि वि बहुसत्तिजुदाण।
अप्पाये वि विच्चदे, बहुअहियं च गुललदि मूढो॥71॥
तव्विवरीय-विवित्तो, कहणपुव्वे खलु चिंतदे जो सो।
सुकज्जेसुं तप्परो, विअण्हो संतो य विवित्तो॥72॥

अर्थ–जो अल्प शक्ति को धारण करता हुआ भी बहुत शक्तिवानों पर क्रोध करता है उनका द्रोह करता है जो अल्प आय होने पर भी बहुत अधिक खर्च करता है एवं चापलूसी करता है वह मूर्ख है। उससे विपरीत विवेकी है। जो कहने के पूर्व सोचता है, अच्छे कार्यों में तत्पर रहता है, तृष्णा रहित व शांत है, वह विवेकी है।

ठाण-सगपय-पदिट्ठा-समयं पस्सिय पालदि कत्तव्वं।
आणंदेण विवित्तो, पडिसंविक्खिय कुणदि कज्जं॥73॥

अर्थ–जो स्थान, अपना पद, प्रतिष्ठा व समय को देखकर आनंदपूर्वक अपने कर्त्तव्य का पालन करता है एवं विचार कर कार्य करता है वह विवेकी है।

वाणी कोइलोव्व सय, णेव होज्जा कोच्छभासोव्व जस्स।
केलीइ वि ण अहियकर-पवित्तिं कुणदि विवित्तो सो॥74॥

अर्थ–जिसकी वाणी कौए के समान नहीं अपितु कोयल के समान मिष्ट होती है, जो खेल-खेल में भी अहितकारी प्रवृत्ति नहीं करता वह विवेकी है।

बाल-बुड्ढ-रोयि-दीण-दरिद्द-बुद्धिहीण-मूकजणेसुं।
कण्णासमत्थविहवादीसुं अणुकंवदि विवित्तो॥75॥

अर्थ–जो बालक, वृद्ध, रोगी, दीन, निर्धन, बुद्धिहीन, मूकजन, कन्या, असमर्थ व विधवा स्त्री आदि पर दया करता है वह विवेकी है।

विहवजुत्ते वि सरलो, तवस्सिम्मि संतो य खमासीलो।
दाणिम्मि वि विणदो जो, जुवे विरत्तो दु विसयादो॥76॥
णिद्धणे वि संतुट्ठो, णाणिम्मि वि अच्चंतविणदो।
कामीसु बंभयारी, इत्थीसु णिच्चलो विवित्तो॥77॥

अर्थ–जो वैभव युक्त होने पर भी सरल, तपस्वी होने पर भी शांत व क्षमाशील, दानी होने पर भी विनम्र, युवा होने पर भी विषयों से विरक्त, निर्धन होने पर भी संतुष्ट, ज्ञानी होने पर भी अत्यंत विनम्र, कामियों के मध्य भी ब्रह्मचारी एवं स्त्रियों के मध्य निश्चल रहता है वह विवेकी है।

इह लोए विज्जंता, विवेगी मूढो उहयविहजणा य।
लक्खणेहि विणा को वि, णेव ता जाणिदुं समत्थो॥78॥

अर्थ–इस लोक में विवेकी व मूर्ख दोनों प्रकार के लोग विद्यमान हैं। लक्षणों के बिना उन्हें जानने में कोई भी समर्थ नहीं है।

मोहो दुह-कारणं च, दुग्गइ-दुरावत्थाण सव्वाणं।
सुविवित्तो णियमेणं, सगवरकल्लाणणिमित्तं दु॥79॥

अर्थ–मूर्खता सभी के लिए दु:ख, दुर्गति व दुरावस्था का कारण है। सुविवेकी नियम से स्वपर-कल्याण का निमित्त है।

चंदक्कोव्व णायगो पयासगो हंसोव्व पवत्तयो य।
अज्जायंसो णदीव, परोवयारी चिय विवित्तो॥80॥

अर्थ–विवेकी पुरुष सूर्य व चंद्रमा के समान नायक, प्रकाशक, हंस के समान प्रवृत्ति वाला आर्य पुरुषों का आदर्श व नदी के समान परोपकारी होता है।

अरिहादी परमेट्ठी, ताणं आलयाइं जिणधम्मं च।
जिणागमं च पणमामि, सुहभावेहि सगसिद्धीए॥81॥

अर्थ–अरिहंतादि परमेष्ठी, उनके आलय (जिनालय), जिनधर्म व जिनागम को स्वसिद्धि के लिए शुभ भावों से नमस्कार करता हूँ।

संती पायसिंधु-जयकित्ति-देसभूसण-विज्जाणंदा।
सूरी णमिय इमो मइ, सूरि-वसुणंदिणा विरइदो॥82॥

अर्थ–चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर जी मुनिराज, महातपस्वी आचार्य श्री पाय सागर जी महाराज, अध्यात्म योगी आचार्य श्री जयकीर्ति जी महाराज, भारत गौरव आचार्य श्री देशभूषण जी मुनिराज, सिद्धांत चक्रवर्ती, राष्ट्र संत श्वेतपिच्छाचार्य श्री विद्यानंद जी मुनिराज को नमस्कार कर यह ग्रंथ मेरे आचार्य वसुनंदी के द्वारा रचा गया।

अड्ढुट्ठकोडी मुणी, जाहिन्तो गदा णिव्वाणं तत्थ।
संभवणाहमंदिरे, तारंगासिद्धखेत्तम्मि य॥83॥
गंथिमो पुण्णो तच्च-गइ-महव्वय-गंध-वीरद्धम्मि दु।
आसोय-अमावसाइ, जम्मतिहीए य पुण्णाहे॥84॥

अर्थ–जहाँ से 3½ करोड़ मुनि मोक्ष गए उस तारंगा सिद्ध क्षेत्र पर श्री संभवनाथ जिनालय में तत्त्व (7) गति (4) महाव्रत (5) गंध (2) ''अंकानां वामतो गतिः'' से 2547 वीरनिर्वाण संवत् में जन्म तिथि आश्विन अमावस्या शुभ दिवस में यह ग्रंथ पूर्ण हुआ।

परम पूज्य अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी आचार्य श्री 108

वसुनंदी जी मुनिराज द्वारा

रचित व संपादित साहित्य

मौलिक कृतियाँ

प्राकृत साहित्य

1. प्राकृत वाणी भाग-1, 2, 3
2. अहिंसगाहारो (अहिंसक आहार)
3. अज्ज-सक्किदी (आर्य संस्कृति)
4. अणुवेक्खा-सारो (अनुप्रेक्षा सार)
5. जिणवर-थोत्तं (जिनवर स्तोत्र)
6. जदि-किदि-कम्मं (यति कृतिकर्म)
7. णंदिणंद-सुत्तं (नंदीनंद सूत्र)
8. णिग्गंथ-थुदी (निर्ग्रन्थ स्तुति)
9. तच्चसारो (तत्त्व सार)
10. धम्म-सुत्तं (धर्म सूत्र)
11. रट्ठ-संति-महाजण्णो (राष्ट्र शांति महायज्ञ)
12. सुद्धप्पा (शुद्धात्मा)
13. अप्पणिब्भर भारदो (आत्मनिर्भर भारत)
14. विज्जा-वसु-सावयायारो (विद्या वसु श्रावकाचार)
15. अप्प-विहवो (आत्म वैभव)
16. अट्ठंग जोगो (अष्टांग योग)
17. णमोयार महप्पुरो (णमोकार माहात्म्य)
18. मूल-वण्णो (मूल वर्ण)
19. मंगल-सुत्तं (मंगल सूत्र)
20. विस्स-धम्मो (विश्व धर्म)
21. विस्स-पुज्जो-दियंबरो (विश्व पूज्य दिगम्बर)
22. समवसरण सोहा (समवशरण शोभा)
23. वयण-पमाणत्तं (वचन प्रमाणत्व)
24. अप्पसत्ती (आत्म शक्ति)
25. कला-विण्णाणं (कला विज्ञान)
26. को विवेगी (विवेकी कौन)
27. पुण्णासव-णिलयो (पुण्यास्रव निलय)
28. तित्थयर-णामत्थुदी (तीर्थंकर नाम स्तुति)
29. रयणकंडो (सूक्ति कोश)
30. धम्म-सुत्ति-संगहो (धर्म सूक्ति संग्रह)
31. कम्म-सहावो (कर्म स्वभाव)
32. खवगराय सिरोमणी (क्षपकराज शिरोमणि)
33. सिरि सीयलणाह चरियं (श्री शीतलनाथ चरित्र)
34. अज्झप्प-सुत्ताणि (अध्यात्म सूत्र)
35. समणायारो (श्रमणाचार)

भावार्थ

1. अज्ज-सक्किदी (आर्य संस्कृति)
2. णिग्गंथ-थुदि (निर्ग्रंथ स्तुति)
3. तच्च-सारो (तत्त्वसार)
4. रट्ठसंति-महाजण्णो (राष्ट्रशांति महायज्ञ)
5. णंदिणंद-सुत्तं (नंदीनंद सूत्र)

टीका ग्रंथ

1. प्रमेया टीका-रत्नमाला (संस्कृत)
2. वसुधा टीका-द्रव्यसंग्रह (संस्कृत)
3. नय प्रबोधिनी-आलाप पद्धति (हिंदी)

इंग्लिश साहित्य

Inspirational Tales Part- 1 & 2

वाचना साहित्य

1. मुक्ति का वाग्दान (इष्टोपदेश)
2. बोधि वृक्ष (प्रश्नोत्तर रत्नमालिका)
3. शिवपथ का रथ (सामायिक पाठ)
4. स्वात्मोपलब्धि (समाधि तंत्र)

प्रवचन साहित्य

1. आईना मेरे देश का
2. उत्तम क्षमा धर्म (आत्मा का ए.सी. रूम)
3. उत्तम आर्जव धर्म (रंचक दगा बहुत दु:खदानी)
4. उत्तम मार्दव धर्म (मान महाविष रूप)
5. उत्तम शौच धर्म (लोभ पाप का बाप बखाना)
6. उत्तम सत्य धर्म (सतवादी जग में सुखी)
7. उत्तम संयम धर्म (जिस बिना नहिं जिनराज सीझे)
8. उत्तम तप धर्म (तप चाहे सुरराय)
9. उत्तम त्याग धर्म (निज हाथ दीजे साथ लीजे)
10. उत्तम आकिंचन धर्म (परिग्रह चिंता दु:ख ही मानो)
11. उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म (चेतना का भोग)
12. खुशी के आँसू
13. खोज क्यों रोज-रोज
14. गुरुत्तं भाग 1-15
15. चूको मत
16. जय बजरंगबली
17. जीवन का सहारा
18. ठहरो! ऐसे चलो
19. तैयारी जीत की
20. दशामृत
21. धर्म की महिमा
22. ना मिटना बुरा है न पिटना
23. नारी का धवल पक्ष
24. शायद यही सच है
25. श्रुत निर्झरी
26. सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य की शौर्य गाथा
27. सीप का मोती (महावीर जयंती)
28. स्वाती की बूँद

हिंदी गद्य रचना

1. अन्तर्यात्रा
2. अच्छी बातें
3. आज का निर्णय
4. आ जाओ प्रकृति की गोद में
5. आधुनिक समस्यायें प्रमाणिक समाधान
6. आहारदान
7. एक हजार आठ
8. कलम पट्टी बुद्धिका
9. गागर में सागर
10. गुरु कृपा
11. गुरुवर तेरा साथ
12. जिन सिद्धांत महोदधि
13. डॉक्टरों से मुक्ति
14. दान के अचिन्त्य प्रभाव
15. धर्म बोध संस्कार (भाग 1-4)
16. धर्म संस्कार (भाग 1-2)
17. निज अवलोकन
18. वसु विचार
19. वसुनन्दी उवाच
20. मीठे प्रवचन (भाग 1-6)
21. रोहिणी व्रत कथा
22. स्वप्न विचार
23. सद्गुरु की सीख
24. सफलता के सूत्र
25. सर्वोदयी नैतिक धर्म
26. संस्कारादित्य
27. हमारे आदर्श

हिंदी काव्य रचना

1. अक्षरातीत
2. कल्याणी
3. चैन की जिंदगी
4. ना मैं चुप हूँ ना गाता हूँ
5. मुक्ति दूत के मुक्तक
6. हाइकू
7. हीरों का खजाना

विधान रचना

1. कल्याण मंदिर विधान
2. कलिकुण्ड पार्श्वनाथ विधान
3. चौसठऋद्धि विधान
4. णमोकार महार्चना
5. दु:खों से मुक्ति (बृहद् सहस्रनाम महार्चना)
6. यागमंडल विधान
7. समवशरण महार्चना
8. श्री नंदीश्वर विधान
9. श्री सम्मेदशिखर विधान
10. श्री अजितनाथ विधान
11. श्री संभवनाथ विधान
12. श्री पद्मप्रभ विधान
13. श्री चंद्रप्रभ विधान (देहरा तिजारा)
14. श्री चंद्रप्रभ विधान
15. श्री पुष्पदंत विधान
16. श्री शांतिनाथ विधान
17. श्री मुनिसुव्रतनाथ विधान
18. श्री नेमिनाथ विधान
19. श्री महावीर विधान
20. श्री जम्बूस्वामी विधान
21. श्री भक्तामर विधान
22. श्री सर्वतोभद्र महार्चना

संपादित कृतियाँ (संस्कृत प्राकृत साहित्य

1. आराधना सार (श्रीमदेवसेनाचार्य जी)
2. आराधना समुच्चय (श्री रविचन्द्राचार्य जी)
3. आध्यात्म तरंगिणी (आचार्य सोमदेव सूरी जी)
4. कर्म विपाक (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
5. कर्म प्रकृति (सिद्धांत चक्रवर्ती आ. श्री अभयचंद्र जी)
6. गुणरत्नाकर (रत्नकरण्ड श्रावकाचार) (आ. श्री समंतभद्र स्वामी जी)
7. चार श्रावकाचार संग्रह
8. जिनकल्पि सूत्र (श्री प्रभाचंद्राचार्य जी)
9. जिन श्रमण भारती (संकलन-भक्ति, स्तुति, ग्रंथादि)
10. जिन सहस्रनाम स्त्रोत
11. तत्त्वार्थ सार (श्री मदमृताचन्द्राचार्य सूरि)
12. तत्त्वार्थस्य संसिद्धि
13. तत्त्वार्थ सूत्र (आ. श्री उमास्वामी जी)
14. तत्त्वज्ञान तरंगिणी (श्री मद्भट्टारक ज्ञानभूषण जी)
15. तच्च वियारो सारो (आ. श्री वसुनंदी जी)
16. तत्व भावना (आ. श्री अमितगति जी)
17. धर्म रत्नाकर (श्री जयसेनाचार्य जी)
18. धम्म रसायण (आ. श्री पद्मनंदी स्वामी जी)
19. ध्यान सूत्राणि (श्री माघनंदी सूरी)
20. नीतिसार समुच्चय (आ. श्री इंद्रनंदी स्वामी जी)
21. पंच विंशतिका (आ. श्री पद्मनंदी जी)
22. प्रकृति समुत्कीर्तन (सिद्धांत चक्रवर्ती श्री नेमीचंद्राचार्य जी)
23 पंचरत्न
24. पुरुषार्थ सिद्ध्युपाय (आ. श्री अमृतचंद्र स्वामी जी)
25. मरणकण्डिका (आ. श्री अमितगति जी)
26. भगवती आराधना (आ. श्री शिवकोटी जी स्वामी)
27. भावत्रयफलप्रदर्शी (आ. श्री कुंथुसागर जी)
28. मूलाचार प्रदीप (आ. श्री सकलकीर्ति स्वामी जी)
29. योगामृत (भाग 1-2) (मुनि श्रीबालचंद्र जी)
30. योगसार (भाग 1, 2) (मुनि श्री बालचंद्र जी)
31. रयणसार (आ. श्री कुंदकुंद स्वामी)
32. वसुऋद्धि
    - रत्नमाला (आ. श्री शिवकोटि स्वामी जी)
    - पूज्यपाद श्रावकाचार (आ. श्री पूज्यपाद जी)
    - लघु द्रव्य संग्रह (आ. श्री नेमीचंद्र स्वामी जी)
    - अर्हत प्रवचनम् (आ. श्री प्रभाचंद्र स्वामी जी)
    - स्वरूप संबोधन (आ. श्री अकलंक देव जी)
    - इष्टोपदेश (आ. श्री पूज्यपाद स्वामी जी)
    - वैराग्यमणि माला (आ. श्री विशाल कीर्ति जी)
    - ज्ञानांकुश (आ. श्री योगीन्द्र देव)
33. सुभाषित रत्न संदोह (आ. श्री अमितगति स्वामी जी)
34. सिन्दूर प्रकरण (आ. श्री सोमदेव स्वामी जी)
35. समाधि तंत्र (आ. श्री पूज्यपाद स्वामी जी)
36. समाधि सार (आ. श्री समंतभद्र स्वामी जी)
37. सार समुच्चय (आ. श्री कुलभद्र स्वामी जी)
38. विषापहार स्तोत्र (महाकवि धनंजय जी)

प्रथमानुयोग साहित्य

1. अमरसेन चरित्र (कविवर माणिक्कराज जी)
2. आराधना कथा कोष (ब्र. श्री नेमीदत्त जी) (भाग 1-2-3)
3. करकण्डु चरित्र (मुनि श्री कनकामर जी)
4. कोटिभट श्रीपाल चरित्र (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
5. गौतम स्वामी चारित्र (मण्डलाचार्य श्री धर्मचंद्र जी)
6. चारूदत्त चरित्र (ब्र. श्री नेमीदत्त जी)
7. चित्रसेन पद्मावती चरित्र (पं. पूर्णमल्ल जी)
8. चेलना चारित्र
9. चंद्रप्रभ चरित्र
10. चौबीसी पुराण
11. जिनदत्त चरित्र (कविवर ब्रह्मराय)
12. त्रिवेणी (संग्रह ग्रंथ)
13. देशभूषण कुलभूषण चरित्र
14. धर्मामृत (भाग 1-2) (श्री नयसेनाचार्य जी)
15. धन्यकुमार चरित्र (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
16. नागकुमार चरित्र (आ. श्री मल्लिषेण जी)
17. नंगानंग कुमार चरित्र (श्रीमान् देवदत्त)
18. प्रभंजन चरित्र (कविवर ब्रह्मराय)
19. पाण्डव पुराण (श्री मदाचार्य शुभचंद्र देव)
20. पार्श्वनाथ पुराण (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
21. पुण्याश्रव कथा कोष (भाग 1-2) (श्री रामचंद्र मुमुक्षु)
22. पुराण सार संग्रह (भाग 1-2) (आ. श्री दामनंदी जी)
23. भरतेश वैभव (कवि रत्नाकर)
24. भद्रबाहु चरित्र
25. मल्लिनाथ पुराण (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
26. महीपाल चरित्र (कविवर श्री चारित्र भूषण)
27. महापुराण (भाग 1-2)
28. महावीर पुराण (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
29. मौनव्रत कथा (आ. श्री श्रीचंद्र स्वामी जी)
30. यशोधर चरित्र
31. रामचरित्र (भाग 1-2) (आ. श्री सोमदेव स्वामी)
32. रोहिणी व्रत कथा
33. व्रत कथा संग्रह
34. वरांग चरित्र (आ. श्री जटासिंह नंदी)
35. विमलनाथ पुराण (श्री ब्रह्मचारीश्वर कृष्णदास जी)
36. वीर वर्धमान चरित्र
37. श्रेणिक चरित्र
38. श्रीपाल चरित्र (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
39. श्री जम्बूस्वामी जी चरित्र (श्री वीर कवि)
40. शांतिनाथ पुराण (भाग 1-2) (कवि असग जी)
41. सप्तव्यसन चरित्र (आ. श्री सोमकीर्ति भट्टारक)
42. सम्यक्त्व कौमुदी
43. सती मनोरमा
44. सीता चरित्र (श्री दयाचंद गोलीय)
45. सुरसुंदरी चरित्र
46. सुलोचना चरित्र
47. सुकुमाल चरित्र
48. सुशीला उपन्यास
49. सुदर्शन चरित्र (पं. गोपालदास बैरया)
50. सुभौम चरित्र
51. हनुमान चरित्र
52. क्षत्र चूड़ामणि (जीवंधर चरित्र)

संपादित हिंदी साहित्य

1. अरिष्ट निवारक त्रय विधान
   - नवग्रह विधान
   - वास्तु निवारण
   - मृत्युंजय (पं. आशाधर जी कृत)
2. श्री जिनसहस्त्रनाम एवं पंचपरमेष्ठी विधान
3. श्री जिनसहस्त्रानाम विधान (लघु) आदि एक नाम अनेक
4. शाश्वत शांतिनाथ ऋद्धि विधान
   - भक्तामर विधान (आ. मानतुंग स्वामी जी (मूल))
   - शांतिनाथ विधान (पं. ताराचंद्र जी)
   - सम्मेदशिखर विधान (पं. जवाहर दास जी)
5. कुरल काव्य (संत तिरुवल्लुवर)
6. तत्त्वोपदेश (छहढ़ाला) (पुं. प्रवर दौलतराम जी)
7. दिव्य लक्ष्य (संकलन-हिंदी पाठ, स्तुति आदि)
8. धर्म प्रश्नोत्तर (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
9. प्रश्नोत्तर श्रावकाचार (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
10. भक्तिसागर (चौबीसी चालीसा संग्रह)
11. विद्यानंद उवाच (आ. श्री विद्यानंद जी मुनिराज)
12. सुख का सागर (चौबीसी चालीसा)
13. संसार का अंत
14. स्वास्थ्य बोधामृत

गुरु पद विनयांजली साहित्य

1. अक्षर शिल्पी (मुनि शिवानंद)
2. पगवंदन (मुनि शिवानंद प्रशमानंद)
3. वसुनंदी प्रश्नोत्तरी (मुनि जिनानंद, ऐ. विज्ञान सागर)
4. दृष्टि दृश्यों के पार (आ. श्री वर्धस्वनंदनी, वर्चस्वनंदनी)
5. स्मृति पटल से भाग 1-2 (आ. श्री वर्धस्वनंदनी)
6. अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी (ऐलक विज्ञान सागर)
7. गुरु आस्था (ऐलक विज्ञान सागर)
8. परिचय के गवाक्ष में (ऐलक विज्ञान सागर)
9. स्वर्णोदय (ऐलक विज्ञान सागर)
10. स्वर्ण जन्मजयंती महोत्सव (ऐलक विज्ञान सागर)
11. हस्ताक्षर (ऐलक विज्ञान सागर)
12. वसु सुबंध (महाकाव्य) (प्रो. डॉ. उदयचंद्र जी जैन)
13. समझाया रविन्दु न माना (सचिन जैन 'निकुंज')